Chapter-7

अध्याय ७

कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास

ऐतिहासिक उपन्यास के पूर्व विवेचित विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास, समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास और वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास के अतिरिक्त उसकी एक और परंपरा दृष्टिगोचर होती है, जो उपन्यास की कथावस्तु के मुख्य पात्र, घटना अथवा वातावरण में से किसी तथ्य के सम्बन्ध में ऐतिहासिकता से प्रतिबद्ध नहीं होती । इस परंपरा-वाले लेखक उपन्यास के उपर्युक्त तत्त्वों का अपनी उर्वर कल्पना के सहारे सर्जन कर उन्हें कृति के परिवेश में स्थान देते हैं, तथापि वे इतना अवश्य ध्यान रखते हैं कि उनकी वह कल्पना-सृष्टि भी पात्रों के नाम, चरित्र-चित्रण और वातावरण के निरूपण आदि से ऐतिहासिकता का स्पर्श या आभास अवश्य लिये हुए हो । इस प्रकार के उपन्यासों में घटना और पात्रों की तो यथावश्यक कल्पना की ही जाती है, साथ ही उनका वातावरण भी इतिहास-प्रमाणित न होकर उससे मिलता-जुलता ही होता है और वह वर्णित युग की केवल एक झलक भी देता है । ऐसे ऐतिहासिक उपन्यासों के तत्त्वों का कलात्मक विनियोजन प्रायः सर्जनात्मक कल्पना के आधार पर ही होता है । लेखक उनके सम्बन्ध में अपनी निजी ऐतिहासिक कल्पना प्रस्तुत करता है । अतः ऐसे उपन्यासों को " कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास " के नाम से अभिहित किया जा सकता है । प्रथम अध्याय के अन्त में हम यह निर्दिष्ट कर आये हैं कि जहाँ उपन्यास का कथानक, उसके पात्र, और उनका चरित्र-चित्रण आदि सभी प्रायः काल्पनिक हों, और ऐतिहासिक वातावरण का वहाँ आभास मात्र हो, ऐसे उपन्यास ऐतिहासिक कल्पना की प्रधानता के कारण कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास कहे जा सकते हैं ।

इस कोटि में रखी जाने योग्य, ऐतिहासिक उपन्यास के विकास-काल की, हिन्दी की लगभग तीन-चार और गुजराती की दो-तीन रचनाएं ही प्राप्य हैं। विवेचनगत सुविधा के विचार से प्रस्तुत अध्याय में केवल प्रतिनिधि रचनाओं को ही अध्ययन के आधार के रूप में ग्रहण किया गया है, जिनकी कालक्रमानुसार सूची इस प्रकार है।

हिन्दी के कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

१	दिव्या	: यशपाल	:	१९४५
२	मुर्दों का टीला	: रांगेय राघव	:	१९४८

गुजराती के कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

१	बाला जोगण	: रमणलाल वसंतलाल देसाई	:	१९५२
२	काल भैरव	: गुणवंतराय आचार्य	:	१९५८

कथावस्तु : हिन्दी के कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

प्रस्तुत वर्ग की रचनाओं में " दिव्या " एक बौद्धकालीन उपन्यास है और उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र प्रस्तुत करता है। " मुर्दों का टीला " सिन्धु की घाटी की सभ्यता के प्रलय द्वारा विनाश सम्बन्धी लेखक की अपनी मान्यता को व्यक्त करता है। दोनों उपन्यास प्राचीन काल की पृष्ठभूमि पर आधारित हैं।

" दिव्या " एक सोद्देश्य रचना है। इसमें लेखक तदनुरूप कल्पित पात्र दिव्या की कथा प्रस्तुत करता है। सरस्वती पुत्री दिव्या की शिविका में कंधा लगाने पर अपमानित पृथुसेन धर्मस्थ देवशर्मा (दिव्या के प्रपितामह)

के पास न्याय के लिए जाता है, वहाँ दोनों परस्पर आकर्षित होते हैं। मद्र पर केन्द्रस के आक्रमण पर पृथुसेन के युद्ध में जाने से पूर्व दिव्या उसे आत्म-समर्पण कर देती है, जिससे उसे गर्भ रह जाता है। छः माह बाद विजयी पृथुसेन के वापस आने पर वह उससे विवाह के लिए प्रयत्न करती है, किन्तु पृथुसेन की उपेक्षा से निराश हो, दास-व्यवसायी के हाथों पड कर उसके पुत्र-जन्म के बाद वह चक्रधर पुरोहित के यहाँ धाय-दासी के रूप में बेच दी जाती है, पुत्र की रक्षा के लिए, वह बुद्ध-संघ की शरण जाती है, वहाँ से निराश हो वह यमुना में कूदती है, वहाँ भी नर्तकी रत्नमाला द्वारा वह बचा ली जाती है और अन्त में मारिस का आश्रय ग्रहण करती है। यह दिव्या की मुख्य कथा है। इसके साथ ही सीरो-पृथसेन एवं दासी छाया तथा दास बाहुल की प्रासंगिक कथाएं भी हैं।

उपर्युक्त तीनों कथाएं तथा पात्र सर्वथा कल्पित हैं। आचार्य प्रवर्धन के पुत्र रुद्रधीर के देश-निर्वासन पर मगध के सेनापति पुष्यमित्र से सहायता प्राप्त कर मद्रगण में ब्राह्मण-धर्म-प्रश्रयी राज्य-संस्थापन का केवल उल्लेख साम्राज्य और गणों के वातावरण की एक झलक प्रस्तुत करता है, क्योंकि मद्र और दार्व की युगीन ऐतिहासिकता का कोई प्रामाणिक आधार नहीं है। अतः कृति में लेखक ने अपने लक्ष्य के स अनुरूप एक ऐतिहासिक कल्पना मात्र की है।

दिव्या का कथावस्तु आद्योपान्त सुशृंखलित एवं संघटित है। कथावस्तु को रोचक और कौतूहल पूर्ण बनाये रखने के लिये, लेखक ने कई आकर्षक और मनोरंजक प्रसंगों की योजना की है। घटनाओं के घात-प्रतिघात द्वारा कथावस्तु को गति-शीलता प्राप्त हुई है और उनसे चारित्रिक उन्मेष के साथ-साथ पाठकों की जिज्ञासा वृत्ति को भी परितोष मिलता है।

" मुर्दों का टीला " ५००० ईस्वी पूर्व के सिन्धु-तट पर स्थित एक महानगर श्रेष्ठी मणिबंध की कल्पनाश्रित कथा है, जिसके द्वारा लेखक तत्युगीन शोषणमूलक समाज-व्यवस्था और राजनीति का चित्र प्रस्तुत करता है ।

" मुर्दों का टीला " की आधिकारिक कथा इस प्रकार है, महानगर के श्रेष्ठी मणिबंध के कीकट की युवती वेणी को अपने आवास में ले जाने से उसकी स्वामिनी नीलूफर विक्षुब्ध हो जाती है और उसे अपने मार्ग से हटाने के लिए वह वेणी के प्रेमी बिल्लि भिक्षुर से मिलती है, पर उसे कोई सफलता प्राप्त नहीं होती । इतने में आर्यों के आक्रमण से निर्वासित कीकट की राजकुमारी चंद्रा और प्रजाजन महानगर में सहायता के लिये आते हैं, किन्तु इससे नगर में अव्यवस्था होने पर मणिबंध के सैनिक उन पर प्रहार करते हैं, इससे प्रजा में विद्रोह हो जाता है । मणिबंध अपनी सैन्य-शक्ति से उसे कुचल कर स्वयं सम्राट् बन जाता है । अपनी इस विजय पर वह वेणी पर बलात्कार करने जाता है, किंतु इतने में ही सिंधु और सर प्रविणी के जल-प्लावन में निमग्न हो जाता है । इसके साथ हेका और अयाम की कथा दास वर्ग की असहिष्णुता और उसके अपनी सीमोल्लंघन पर विद्रोह की साहजिकता का निरूपण करती है, तो चंद्रा की कथा अपनी स्वतंत्रता और स्वाभिमान के लिये संघर्ष का जीवन्त स्वरूप व्यक्त करती है ।

प्राच्य-विद्या-विभाग द्वारा मोहन जोदड़ों के उत्खनन कार्यों में से इस महानगर की द्रविड संस्कृति के कई तथ्य प्राप्त हुए हैं । लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में उन तथ्यों के आधार पर अपनी कल्पना के सहारे तत्युगीन वातावरण की झांकी कराने के लिये महानगर से सम्बद्ध कथावस्तु [illegible] की परिकल्पना की है ।

कथावस्तु में कुतूहल और मनोरमता की सृष्टि प्रस्तुत करने के लिये लेखक ने कई प्रसंगों और सुंदर दृश्यों की संयोजना की है। उसके मनोरम आरंभ के बाद घटनाएं उत्तरोत्तर घटती जाती हैं और लेखक अपने उद्देश्य के अनुरूप सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए आगे बढ़ता है। कुछ एक स्थलों पर वर्णन-बाहुल्य कथा के प्रवाह में गत्यवरोध उत्पन्न करता है, इससे सम्बद्ध स्थलों पर वस्तुगठन में शिथिलता उभर आई है। इसके अतिरिक्त कथावस्तु सुशृंखलित एवं सुनियोजित है।

गुजराती के कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

प्रस्तुत वर्ग में गृहीत रचनाओं में से " बाला जोगण " १६ वीं शताब्दी के आरम्भ में विद्यमान मीरा के भक्तिमय जीवन पर आधारित है, जबकि " कालभैरव " चौथी-पांचवी शताब्दी के सौराष्ट्र के चावडा वंशीय कनकसेन के सामुद्रिक साहसों की कथा लिये हुए है।

यहां इस वर्ग में गृहीत रचनाओं के सम्बन्ध में यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इन में कल्पना का प्रयोग ऐतिहासिक तथ्यों से भी सम्पृक्त है, किन्तु लेखक वहां ऐतिहासिकता से प्रतिबद्ध होकर नहीं चलता, वरन् उनमें कल्पना का यथेष्ट प्रयोग करता है। अतः ऐतिहासिक तथ्यों से सम्पृक्त होने के उपरान्त भी इन्हें कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में ग्रहण किया गया है। " बाला जोगण " के विषय में यह स्पष्टीकरण नितान्त आवश्यक है। कृष्णभक्त मीरा के जीवन सम्बन्धी प्राप्य ऐतिहासिक तथ्य उपन्यास में ग्रहण किये गये हैं।[1] किन्तु लेखक मीरा

१ (I) श्री र० व० देसाई, " बाला जोगण ", प्रस्तावना, पृ०
(II) डा० सी० एल० प्रभात, मीराबाई ~~एक अध्ययन~~ पृ० ११३ से १६४ और पृ० २२३ से २२८

के मत जीवन को औपन्यासिक रूप प्रदान करने में ऐतिहासिक तथ्यों के उपरांत भी कल्पना का उन्मुक्त प्रयोग करता है। रूढ़ीवादी राजपूत परिवार की मीरा का किशोरावस्था में भाई जयमल के साथ शिकार के लिये जाना, वन में भावीपति भोजराज का मिलना, उसे मेड़ता लाने पर मीरा का स्वयं भोजराज के साथ देहस्पर्श रहित विवाह सम्बन्धी बातचीत का निश्चित करना और मेवाड में भोज की मरणासन्न अवस्था में कृष्णचरण को मीरा-देह-दर्शन आदि प्रसंगों के चित्रण में ऐतिहासिक प्रतिबद्धता का सर्वथा अभाव और कल्पना का मुक्त प्रयोग है। इसी कारण इसे कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों की कोटि में ग्रहण किया गया है। यदि इसमें ऐतिहासिक प्रतिबद्धता का अभाव न होता, तो यह समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में रखे जाने योग्य होता। किन्तु प्राप्य अवस्था में गुजराती के सुधी समीक्षक डा० सुरेश जोशी के मन्तव्यानुसार इसे प्रस्तुत वर्ग में रखना ही उपयुक्त माना गया।[1] काल भैरव भी लेखक के कथनानुसार जनश्रुति[2] पर आधारित होने के कारण एवं कल्पना के सहारे प्रस्तुत किये जाने के कारण इसी कोटि के अन्तर्गत लिया गया है।

" बाला जोगण " में मीरा बाल्यावस्था में ~~की अवस्था में मां~~ के निधन पर कृष्णभक्त दूदाजी के संस्कारों से वह कृष्ण-भक्ति की ओर मुड़ती है। भक्ति की तल्लीनता में ही उसके विवाह योग्य होने पर मेवाड के राणा संग्राम सिंह के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज के साथ उसका विवाह हो जाता है, किन्तु इससे भक्ति में कोई विक्षेप नहीं आता। अल्प काल के पश्चात् भोज के निधन पर राणा विक्रमसिंह उसे मारने के लिये सर्प और विष के प्रयोग की विफलता पर उसे

१ डा० सुरेश जोशी से प्रत्यक्ष विचार-विमर्श के आधार पर

२ काल भैरव, परिचय, पृ० १

चित्तौड से निर्वासित कर देता है। वहां से वह ब्रज, गोकुल और वृन्दावन आदि धामों की यात्रा के बाद द्वारका आकर सदैव के लिए कृष्णलीन हो जाती है। बाला-जोगण की इस आधिकारिक कथा के साथ रैदास के शिष्य और मीरा के भक्त-साथी कृष्णचरण के विकृत मानस के विश्लेषण और उदात्तीकरण की प्रासंगिक कथा भी विद्यमान है।

" बाला-जोगण " की कथा को लेखक ने चार भागों में विभक्त कर और प्रत्येक में अपने प्रतिपाद्य का निरूपण कर उसका सुंदर संयोजन किया है। कथावस्तु में रोचकता, और कुतूहल तत्त्व के निर्वाह के लिए लेखक ने कई दृश्यों और प्रसंगों को इसके साथ ~~थ~~ गुम्फित किया है। कई स्थानों पर युगीन परिस्थितियों का सुदीर्घ विश्लेषण कथा की गतिशीलता में अवरोध उत्पन्न करता है। इसके अतिरिक्त शेष कथा सुगठित और सूत्रबद्ध है।

" काल भैरव " में सौराष्ट्र की जनश्रुति पर आधारित मौर्य शासन की समाप्ति के बाद सोमनाथ में अक्षयराज चावडा के राजकुमार कनकसेन और ओखा मंडल की काला आदिवासी सामुद्रिक जाति के अग्रणी नाग सेंधार के संघर्ष की कथा है। बारह वर्ष पूर्व नाग द्वारा अक्षयराज की विश्वासघात पूर्वक हत्या कर देने से दोनों में ही वैर था।

एक काली चौदस को नाग के अघोर पूजन के अपूर्ण रहने पर रुद्रराशि के आदेशानुसार नाग की असुर सुंदरी राखिता को कनकसेन के अपने संरक्षण में लेने पर नाग और कनकसेन में युद्ध होता है। कनकसेन पिता की हत्या का बदला लेने के लिए नाग का सिर मां के चरणों में लाकर रखने की प्रतिज्ञा करता है। नाग के कालभैरव की पूजा के बाद युद्ध आरंभ होता है, जिसमें कनकसेन विजयी रहता है और नाग के जहाजों को अधीन कर

उसके गाधवी बंदर पर आक्रमण करने पहुंचता है, किन्तु नाग की अनुपस्थिति में उसे यवनों से घिरा पा वह शत्रु के परिवार और उसकी प्रजा की रक्षा करता है। इससे नाग का शत्रु-भाव समाप्त हो जाता है और उसे यवनों से सोमनाथ की रक्षा के लिये भेजने के बाद उसकी प्रतिज्ञा पूरी करवाने के लिए अपनी पुत्री से अपना सिर कटवा कर भिजवा देता है।

कनक सेन चावड़ा और नाग संघार की मुख्य कथा के साथ रानिता और सक्कर बेलीम तथा पल्लवी और अनन्त चावडा की प्रासंगिक कथाएं भी विद्यमान हैं, जो मुख्य कथा के साथ सुसम्बद्ध रूप में चलती हैं। उपर्युक्त द्वितीय प्रासंगिक कथा और अन्य कतिपय प्रसंगों की उद्भावना से लेखक ने कथा में रोचकता और कुतूहल तत्त्व का आद्योपान्त निर्वाह किया है। अपनी पुत्री और प्रजा की रक्षा करने वाले शत्रु को उपन्यास के अंत में नाग द्वारा अपना सिर भिजवा कर कथा की हृदय स्पर्शी और मार्मिक परिणति प्रस्तुत की है।

तुलना और निष्कर्ष :

उपर्युक्त उपन्यासों के कथावस्तु का तुलनात्मक अध्ययन करने पर निष्कर्षतः निम्नांकित तथ्य प्रकाश में आते हैं।

(१) " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " एवं " काल भैरव " प्राचीन भारतीय परिवेश की कल्पना से युक्त हैं। " बाला जोगण " सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में कृष्ण-भक्ति लीन मीरा की जीवन गाथा प्रस्तुत करता है।

(२) उपर्युक्त प्रथम दो में लेखक के अपने सिद्धान्तों के अनुसार व्यक्ति और समाज की गतिविधियों की रोचकतापूर्ण अभिव्यक्ति की गई है।

" काल भैरव " में लेखक समुद्री प्रदेश के निवासियों और उनके शासकों के साहस पूर्ण कार्यों का रोचक वर्णन प्रस्तुत करता है। " बाला जोगण " पूर्व निर्दिष्टानुसार मीरां की भक्ति का रोचक और प्रभावशाली स्वरूप प्रस्तुत करती है।

(१) वस्तु गठन की दृष्टि से " दिल्ला " और " काल भैरव " की कथावस्तु संक्षिप्त और सुगठित है, जबकि " मुर्दों का टीला " एवं " बाला जोगण " की कथावस्तु कुछ विस्तृत है और कई स्थलों पर शैथिल्य से युक्त। कथावस्तु की सुसम्बद्धता और संयोजन उपर्युक्त चारों कृतियों में अपेक्षित रूप में विद्यमान है।

चरित्र-चित्रण :

कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप पर विचार करते हुए प्रस्तुत अध्याय के आरंभ में यह निर्दिष्ट कर दिया गया है कि इन उपन्यासों के पात्र प्रायः उपन्यासकारों की कल्पना-सृष्टि की देन होते हैं। आनुषंगिक रूप में उपन्यास के कथावस्तु, पात्र और उसके वातावरण के सम्बन्ध में ऐतिहासिकता की झलक या भ्रांति उत्पन्न करने के लिये कहीं ऐतिहासिक पात्रों का नामोल्लेख वहां हो सकता है, किन्तु उपन्यास में वे किसी विशेष महत्त्व के अधिकारी नहीं होते। इन काल्पनिक पात्रों की सृष्टि में भी लेखक इनके नामकरण चरित्र-चित्रण और इनके पार्श्ववर्ती परिवेश का निरूपण करने में इस बात का अवश्य ध्यान रखता है कि वे काल्पनिक पात्र संभाव्यता की दृष्टि से कृति के युग की ऐतिहासिकता के अनुरूप लगें, पाठक को उपन्यास पढते हुए वे इतिहास के से लगें।

पूर्व विवेचित ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्रों के अध्ययन

के लिये पात्रों का एक वर्गीकरण अपनाया जा चुका है। कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखकों ने अपने सिद्धान्त-प्रतिपादन की दृष्टि से कुछ नई पात्र-सृष्टि भी प्रस्तुत की गई है। अतः पात्रों के कुछ एक विशेष वर्ग के साथ प्रस्तुत वर्ग उपन्यासों के पात्रों का अध्ययन करने के लिये पूर्व प्रयुक्त वर्गीकरण का ही आधार ग्रहण किया जा रहा है।

शास्ता वर्ग :

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में केवल हिन्दू शास्ता वर्ग के पात्र दृष्टिगोचर होते हैं। इनमें गणपति राजा (राणा) और राजकुमार तथा सामंत आदि तीन कोटियाँ विद्यमान है। प्रत्येक कोटि के पात्रों में प्रायः वही विशेषताएं हैं जिनका उल्लेख पूर्ववर्ती अध्यायों में किया जा चुका है। उनको लक्ष्य कर यहाँ उनके न्यूनाधिक वैशिष्ट्य का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

गणपति मिथोद्रस (दिव्या) भद्रगण के तथाकथित महा-सेनापति और गणपति हैं। उनमें गण की स्वतंत्रता और स्वायत्तता के लिए उनका प्रेम भद्र की उत्तर-पूर्वी सीमा पर दार्वराज केन्द्रस के आक्रमण के समय दिखाई देता है। वयोवृद्ध होने पर भी प्रत्येक कार्य के ब्यौरे से निर्देशन और निरीक्षण में उनके शासकीय सामर्थ्य की झलक मिलती है, किन्तु युद्ध में विजय के पश्चात् उनके रोगग्रस्त होने पर श्रेष्ठी प्रेस्थ उनके कार्यभार का संवहन करता है।

राणा संग्रामसिंह, विक्रमसिंह और उदयसिंह (बाला नोगण) तीनों राजा कोटि के हैं और मेवाड़ के राणा पद के अधिकारी। संग्राम सिंह एक आदर्श हिन्दू राजा है, जो आजीवन अपने प्रदेश की स्वाधीनता को

अखंड रखने के लिये दिल्ली, मालवा और गुजरात की मुसलमान सल्तनतों से संघर्ष करता रहा। मीरा के लिये वह आदर्श श्वसुर-पिता के रूप में अंकित है। राणा विक्रमसिंह एक आततायी राजा के रूप में चित्रित किया गया है, जिसने मीरा पर नागदंश, और विषपान के अत्याचार किये एवं उसे मेवाड़ से निर्वासित किया। राणा उदयसिंह राणा विक्रमसिंह का एक विपरीत स्वरूप हमारे सामने प्रस्तुत करता है। वह बहुत ही विनम्रशील है, मीरा को मेवाड़ लिवा लाने के लिये वह स्वयं व्रज जाकर मीरा से निवेदन करता है।

राणा संग्राम सिंह का ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार भोजसिंह एक योग्य क्षत्रिय वीर और आदर्श पति के रूप में अंकित है। ~~मालवा~~ मीरा को पवित्र पतित्व की उपलब्धि का श्रेय भोजसिंह को ही जाता है। मालवा युद्ध में विजय का श्रेय लेकर वह मेवाड़ आता है, किंतु विक्षत अवस्था में। अंत में मीरा को वह उसकी इच्छानुसार कृष्ण-प्राप्ति तक शरीर धारण किये रहने के वचन पर प्राण छोड़ता है। सोमपट्टन (सोमनाथ) का राजकुमार कनकसेन एक आदर्श राजा के गुणों से युक्त पात्र है जो दीन-दुःखी प्रजा के मन में ही नहीं, अपितु शत्रु को भी अपने व्यक्तित्व से प्रभावित करता है। युद्ध से पूर्व अपने प्रदेश में काल भैरव की पूजा करने की अनुमति अपने शत्रुनाग को देने में उसकी उदारता, एवं शत्रु की अनुपस्थिति में उसकी कन्या, परिवार और प्रजा की रक्षा में उसकी शालीनता उसके शत्रुनाग में से शत्रुभाव को समाप्त कर देते हैं। इसीलिये नाग ऐसे शत्रु को जो उसका सिर पितृ-वैर-शोध के लिये मा के चरणों में रखने की प्रतिज्ञा लिये हुए हैं, प्रतिज्ञा की अपूर्ति के दुःख से बचाने के लिए स्वयं अपना मस्तक उसके पास भिजवा देता है। नाग संघार एक परम काला सामुद्रिक आदिवासी जाति का शासक, बहुत ही क्रूर, समुद्री लुटेरा और भयंकर नरसंहारक। कनकसेन के शालीन व्यवहार द्वारा लेखक ने इसमें आत्मोत्सर्ग द्वारा उदात्तीकरण का निरूपण किया है।

दूदाजी और उनके पुत्र वीरम देव और रत्नसिंह राणा संग्रामसिंह के दरबार के सामंत और क्षत्रिय सुभट हैं। इनमें अन्य सामंतों की सी मिथ्याभिमान और विलासिता - जैसी हेयवृत्तियाँ नहीं हैं। दूदाजी के स्वयं एक स्वामीभक्त और कर्तव्यपरायण क्षत्रिय होने के कारण उनके पुत्रों में भी वही उदात्त गुण दृष्टिगत होते हैं। तीनों अलग अलग युद्ध में देश के गौरव की रक्षा के लिये वीरगति पाते हैं। जयमल मीरा का, ताऊ का बेटा, भाई और भक्त साथी है।

मंत्री वर्ग :

" काल-भैरव " के एक मात्र, यवन देश से शिक्षा-प्राप्त, यवनाचार्य यहाँ मंत्री के रूप में प्राप्य हैं, बहुत ही धीर, स्वस्थ और प्रबुद्ध। युद्धकालीन परिस्थितियों में भी वे सदैव स्वस्थ और प्रत्येक स्थिति पर दृष्टि रखते हैं। उनकी यह विचक्षणता और कुशलता उन्हें मंत्री-काल और युद्ध-काल में अद्भुत सफलता प्रदान करती है।

सैन्य वर्ग :

" दिव्या " का सर्वश्रेष्ठ खड्गधारी पृथुसेन इस वर्ग में आता है। केन्द्र के साथ प्रथम युद्ध में वह एक विजयी और सफल सेनापति सिद्ध होता है, किन्तु उसके बाद अन्तःस्वस्थ की दृष्टि से बहुत ही हीन और विफल। विजय के बाद पिता प्रेरुथ के सत्ताकांक्षी और गणपति सीरो के एकाधिकार के विचारों के सम्मुख झुककर एवं दिव्या की उपेक्षा करके वह आत्महन्ता बनता है। बाद में आचार्य रुद्रधीर के निर्वासन की अवधि के बाद उनके लौट कर सागल आने पर और गण की सत्ता हथिया लेने पर वह बौद्ध भिक्षु बन कर अपने प्राण बचाता है।

आचार्य वर्ग :

धर्मस्थ देव शर्मा, आचार्य प्रवर्धन और आचार्य रुद्रधीर इस कोटि में आते हैं। धर्मस्थ देव शर्मा गण के न्याय तंत्र के संरक्षक एवं समन्वयात्मिका वृत्ति के पोषक हैं। आचार्य प्रवर्धमान, ~~अग्रहार~~ अग्रहार, और गण-परिषद् के संवाहक के रूप में हमारे सामने आते हैं। आचार्य रुद्रधीर आचार्य प्रवर्धमान का ज्येष्ठ पुत्र, पृथुसेन को दास-पुत्र कह अपमानित करने के दंड स्वरूप एक सहस्र दिन सागल-निर्वासन के बाद पुनः सागल आकर सत्ता-परिवर्तन करके गण-परिषद्-संवाहक और गण-सचिव बन जाता है।

जनसाधारण वर्ग :

इस वर्ग में आर्य मारिश (दिव्या) विल्लिमित्तुर (मुर्दों का टीला) कृष्ण चरण (बाला जोगण) सक्कर वेलीम, शंभु बेगडो, और अनन्त चावडा (काल भैरव) आदि पात्र आते हैं, जिनमें से प्रत्येक के व्यक्तित्व का अपना वैशिष्ट्य है। आर्य मारिश एक अपदस्थ मूर्तिकार, चार्वाक के लोकायत दर्शन का समर्थक, दार्शनिक, अपने तर्कों से अभिजात वर्ग और जन साधारण में सम्मान और स्नेह का अधिकारी, जीवन का स्वस्थ द्रष्टा और परम्परा आश्रय में जीवन की सार्थकता और परम्परा में जीवन की तृप्ति और अमरता का अनुभव करने वाला। वह लेखक के विचारों को प्रस्तुत करने वाला एक प्रतिनिधि पात्र है। विल्लिमित्तुर एक गायक, कवि, शोषक महाश्रेष्ठी मणिबंध के उसकी प्रेमिका वेणी को उठा ले जाने पर विफल प्रेमी, किन्तु लोक जीवन के प्रति संवेदनशील, महानगर में प्रजा के विद्रोह करने पर राजकुमारी चंद्रा के साथ वह विद्रोह का सेनापति बन धर्मिकों की बलिवेदी पर हुतात्मा हो जाता है। कृष्ण चरण रैदास का शिष्य और मीरा का भक्त साथी है। वह विकृत मानस के विश्लेषण और उदात्तीकरण की प्रक्रिया का द्योतक पात्र है।

पिता की स्त्री-लुब्धता की वृत्ति उसके मन में मीरा के देह-सौन्दर्य के प्रति अनन्य आकर्षण उत्पन्न कर देती है, जिससे हठयोग, ध्यान, धारणा, शास्त्र-चिंतन आदि के अपनाने पर भी वह मुक्त नहीं हो सका। यह आसक्ति उसे " ॐ " के ध्यान में, चित्तौड़ दुर्ग में सर्वत्र मीरा का दर्शन कराती है। अन्ततः कृष्णमयी मीरा से उसकी प्राप्ति की स्थिति कृष्णचरण के नारी-मोह का उन्मूलन कर उसे कृष्णभक्ति में दीक्षित करती है। सक्कर बेलीम एक विपुल काय, शक्तिशाली और यवनाचार्य का विश्वस्त यवन अनुचर, जो उनके स्नेह के वशीभूत हो भारत आ बसता है। असुर सुंदरी राखिता के संरक्षण में उसका शौर्य और नारी-दाक्षिण्य अद्भुत है। शंभु बैगडो और अनंत चावडा, कनकसेन और नाग युद्ध के विश्वासपात्र, देशप्रेमी और कर्तव्य परायण सैनिक हैं।

संत-फकीर वर्ग :

इस कोटि के अन्तर्गत रैदास और साऊद्दौला का समावेश होता है। रैदास एक अन्त्यज हिन्दू संत हैं और विख्यात कृष्णभक्त, कृष्ण-मूर्ति के दान से मीरा के गुरु माने जाने वाले। साऊद्ददौला एक सूफी फकीर है, जो पूर्व जीवन की अत्यासक्ति के बाद सूफी बन प्रकृति में सर्वत्र ईश्वर की झलक देखता है। कृष्णचरण का नारीमोह इन्हीं की नारी आसक्ति का प्रस्फुटित रूप है।

अघोर पंथी साधु :

अघोर पंथ का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र हैं, रुद्रराशि, और उनका शिष्य शंकर राशि (काल भैरव)। रुद्रराशि हैं, कापालिक आचार्य, अघोर पंथियों के गुरु और अपनी तपस्या के बल पर मोक्ष धाम के

सन्निकट । उनका शिष्य शंकर राशि, सिद्धियों का सफल प्रयोक्ता, किन्तु हीन वृत्ति का साधक । अघोर पूजन के समय शंकर राशि द्वारा मोहन-प्रयोग करने पर अघोर पूजन को अपूर्ण छोड मंडल को समाप्त कर रुद्रराशि का जल-समाधि लेना उनके चरित्र को देखते स्वाभाविक नहीं लगता ।

श्रेष्ठी वर्ग :

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में श्रेष्ठी वर्ग उन धनिकों का वर्ग है, जो धन से अधिकार-प्राप्ति और फिर दोनों के ऐच्छिक उपयोग से निरंकुश सत्ता और शोषण के प्रयोक्ता बन जाते हैं । श्रेष्ठी प्रेस्थ (दिव्या) और महाश्रेष्ठी मणिबंध, विश्वजित् और मिश्र श्रेष्ठी आमेन-रा (मुर्दों का टीला), इस वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं । प्रेस्थ अपनी कुशलता से शालिहोत्र से मद्र गण का संवाहक बन जाता है एवं गणपति की पौत्री सीरो के साथ पृथुसेन के विवाह द्वारा गणपति की मुद्रा एवं सत्ता का प्रयोक्ता भी । मणिबंध भी एक समय का सिन्धुदत्त, कर्मकरों के निरीक्षक की स्थिति से किसी सार्थ में सम्मिलित हो स्वामी-वध कर सार्थाधिपति और महाश्रेष्ठि बन जाता है, तथा महानगर में विद्रोह के समय अपनी सैन्य-शक्ति के बल पर विद्रोह का दमन कर वह स्वयं सम्राट् भी हो जाता है । विश्वजित् और आमेन-रा लगभग इसी कोटि के पात्र हैं । धनार्जन और शोषण का चक्र अन्ततः इन्हें ही लील जाता है । दास-व्यवसायी प्रतूल और मूधर मानवीय जघन्यता के सीमास्तम्भ हैं ।

शोषित वर्ग :

दासी धाता, छाया (दिव्या) हेका (मुर्दों का टीला) और दास वाहुल (दिव्या) और अयाप (मुर्दों का टीला) तथा कीकट वेणी

निवासी वेणी और विल्लिमित्तूर (मुर्दों का टीला) इस वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। दास वर्ग के पात्र दास होने के कारण निर्वाक् और निरीह जीवन के प्राणी हैं। स्वामी की सेवा, आनुषंगिक अत्याचारों को सहन करते हुए जीवनयापन इनका सहज धर्म है, किन्तु अत्याचार की अति पर परिणाम-निर्द्वन्द्व विद्रोह ही इनकी असहिष्णुता की अभिव्यक्ति है। उपर्युक्त दास वर्ग इसी स्थिति का अभिव्यंजक है। विल्लिमित्तूर अपनी प्रेमिका वेणी को कीकटाधिपति की कामुक दृष्टि से बचाने महानगर ले आता है, जहां महा श्रेष्ठी मणिबंध जैसे प्रेयसी कतरे का शिकार हो जेब कटे यात्री की स्थिति में विवश हो बैठ रहता है। शोषण की इस प्रक्रिया से सभी दास और जन साधारण वर्ग पीड़ित है। वेणी का कीकटाधिपति की कामुक दृष्टि से बचने अपने प्रेमी विल्लिमित्तूर के साथ महानगर में आना, वहां प्रेमी कवि को सड़क पर टहलता छोड़, मणिबंध के प्रासाद को स्वीकार करना और नीलूपत्तर की प्रतिस्पर्धा में कवि द्वारा विजयी बनाने पर भी उसकी हत्या के लिये प्रयत्न करना और अंत में मणिबंध के बलात्कार के लिये उद्यत होने पर प्रासाद से भागना आदि उसके चरित्र को सत्वहीन और अस्वाभाविक बना देते हैं।

स्त्री पात्र :

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में चित्रित स्त्री पात्र राजमाता, राजकुमारी, नर्तकी और सामान्या आदि रूपों में प्राप्त हैं। कृष्ण भक्त मीरा का स्त्री पात्रों में सर्वोपरि और अनन्य स्थान है। बाल्यावस्था में दूदाजी से कृष्ण भक्ति के संस्कारों का अभिषिंचन, भक्ति की तल्लीनता में आभासित कृष्णलीला के दृश्यों का चित्रांकन और काव्य-सर्जन, विवाहोपरांत उसके विरोधियों द्वारा उसका अनुसरण, व्रज-गोकुल में मीरा की कृष्ण-भक्ति की धूम, भक्त-समुदाय द्वारा उसका शिष्यत्व स्वीकार करने की उत्कण्ठा,

उसके सम्पर्क में आने वालों पर उसका अक्षुण्ण प्रभाव और द्वारका में श्री कृष्ण में उसका विलय मीरा के भक्त-जीवन का वैविध्य प्रस्तुत करते हैं।

सोमनाथ के राजकुमार कनकसेन की माता एक योग्य राजमाता के रूप में चित्रित है, जो यवनाचार्य की सहायता से राज्य का शासन करती है और कनकसेन में सहजरूप से एक आदर्श राजा के गुणों का विकास करती है।

राज कुमारी चंद्रा अपनी स्वतंत्रता के लिये प्राणों की आहुति दे देने वाली स्वातंत्र्य-प्रिय आत्मा है।

मल्लिका और रत्नप्रभा क्रमशः भद्र और शूरसेन प्रदेश की जनपद कल्याणी हैं, नृत्य-कला द्वारा जनमन-रंजन में निपुण।

नीलूफर और राखिता, दोनों यवन सुंदरियां हैं जो मणिबंध और नाग द्वारा भारत भूमि पर लायी जाती हैं।

धर्मस्थ देव शर्मा की पौत्री, पृथुसेन की वंचिता प्रेमिका दिव्या उस सामान्य नारी वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है, जो जीवन की घटनाओं के घात प्रतिघात से आकर्षित-विकर्षित हो आश्रय की खोज में भटकती रहती है। पल्लवी प्रणय-विनोद और देशभक्ति से युक्त एक चपल बाला है। सोहनी संधार एक साहसी, निर्भीक, स्वाभिमान-प्रिय और उत्सर्ग की प्रतिमूर्ति है। पिता की इच्छानुसार कनकसेन की प्रतिज्ञा-पालन में सहयोगी होने के लिये पिता का सिर काट उसे देना नाग-कन्या सोहनी संधार ही कर सकती है।

उपर्युक्त पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के उद्घाटन के

लिये प्रस्तुत अध्याय में लेखकों ने इतिवृत्तात्मक, नाटकीय एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया है ।

सर्व प्रथम वर्णनात्मक शैली में लेखकों द्वारा प्रस्तुत पात्रों के शब्द चित्र और रेखांकन द्रष्टव्य हैं । मधुपर्व (दिव्या) की प्रतिस्पर्धाओं के समापन पर दिव्या और पृथुसेन का चित्रण यहां उल्लेखनीय है : " दोनों ही पुरस्कार विजेता अपनी कला के वेश में साधारण नागरिकों से भिन्न अपनी कला के प्रतिरूप मात्र जान पड़ते थे । कुमारी दिव्या शुभ्र वायवीय, श्वेत उत्तरीय में मराली का प्रतिरूप और कुमार पृथुसेन नासिकाग्र और कंधों तक छाये सिरस्त्राण और वर्म में शस्त्र-शक्ति की मूर्ति की भांति । " [1] यहां दिव्या अपनी श्रेष्ठ नृत्य-कला के लिये "सरस्वती पुत्री " और पृथुसेन युद्ध-कौशल में श्रेष्ठ खड्गधारी के रूप में उद्घोषित होने पर अपनी तदनुरूप वेश-भूषा में प्रस्तुत हैं ।

" काल-भैरव " में सक्कर बेलीम का आकृति वर्णन दो पृष्ठों तक चलता है, उसका आरंभिक स्वरूप देखिये - " पूरे छः हाथ ऊंचा और दो हाथ चौड़ा यह मनुष्य था । श्वास ले तो मानो हवा सुस जायगी और चले, तो मानो इसके पैरों के आघात से धरती टूट जायेगी, ऐसी भीति उत्पन्न हो ऐसा । " [2] ------ अंत में लेखक बताता है मानो हाथी ने मनुष्य का रूप धारण किया हो ऐसा यह नर-हस्ति चला जा रहा था । [3] इससे बेलीम के शरीर की बलिष्ठता और मन की निर्द्वन्द्वता स्पष्ट है । इसी प्रकार प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में आचार्य रुद्रधीर, आर्य मारिश, श्रेष्ठि

१ दिव्या, पृ० १७

२ कालभैरव, पृ० १

३ वही, पृ० २

प्रेष्ठ, मणिबंध, नीलूफर, वेणी, मीरा, मोज, नाग, कनकसेन, रुद्रराशि, राखिता, पल्लवी, सोहनी, शंभु बेगडो आदि के व्यक्तित्व की विशिष्टताएं प्रकट की गयी हैं।

पात्रों के व्यक्तित्व के ये चित्र अपने परिवेश के पात्रों को प्रभावित करते हैं, दूसरी ओर उसका विश्लेषण पाठकों में उनके प्रति नयी जिज्ञासाएं उत्पन्न करता है। " दिव्या " में " सरस्वती पुत्री " का श्रेय प्रदान कराने वाली दिव्या की नृत्यकला के सम्बन्ध में आर्य मारिश एक दिन दिव्या से कह उठता है - " भद्रे, तुम्हारी कला तुम्हारी आकर्षण शक्ति का निखार मात्र है, जो नारी में सृष्टि की आदि शक्ति है। "[1] मारिश द्वारा दिव्या की कला की प्रशंसा से उस पर पड़े मारिश के कथन का प्रभावात्मक चित्रण देखिये - " अनैतिकता और अनाचार के समर्थन का अपवाद पाये मारिश के इन शब्दों, उनके स्वर और नेत्रों के भाव से दिव्या को अर्शकाम्य रोमांच हो आया था। "[2] प्रशंसा से उत्पन्न यह रोमांच मारिश के व्यक्तित्व की प्रभावात्मकता का परिचायक है। " काल भैरव " में प्रजा में व्याप्त नाग (काला नाग, नाग संघार आदि) का प्रभावात्मक चित्रण भी इसी कोटि का उदाहरण है।[3]

पात्रों के शब्द-चित्र और रेखांकन के अतिरिक्त विशेष परिस्थितियों में उनकी प्रतिक्रियाएं और उनके विचार भी उनके चरित्र की विशेषताओं को उद्घाटित करते हैं। " मराली का आत्मसमर्पण " नृत्य में राजहंस और मराली दोनों के वधिक के जाल में फंसने पर एक काषाय चीवरधारी भिक्षु

१ दिव्या, पृ० २८

२ वही

३ काल भैरव, पृ० २६

उद्बोधन करता है, " बुद्धिमान जन देखें, और जाने, माया के बंधन में जीव को इसी प्रकार सुख की मिथ्यानुभूति का भ्रम होता है । "[1] इस पर चारों ओर छायी स्तब्धता में मारिश का ऊँचा सुनाई देता है - " मंते, दुःख की भ्रांति में जीवन का शाश्वत क्रम इसी प्रकार चलता है । वैराग्य मीरु की आत्म-प्रवंचना मात्र है । जीवन की प्रवृत्ति, प्रबल और असंदिग्ध सत्य है । "[2] यहाँ माया के बंधन के प्रति बौद्ध भिक्षु की प्रतिक्रिया और जनता को उद्-बोधन एवं बौद्धभिक्षु द्वारा इंगित वैराग्य के भाव के प्रति आर्य मारिश की प्रतिक्रिया और जीवन की प्रवृत्ति की प्रबलता और उसके शाश्वत क्रम का समर्थन दोनों के विरोधी विचारों और उनके व्यक्तित्वों के परिचायक हैं । इसी प्रकार " काल भैरव " में स राजिता को संरक्षण देने के समय मंत्रणा में राजमाता का कथन - " और कुछ तो नहीं नाग संघार के साथ संघर्ष होगा । "[3] कनकसेन को पितृहंता के वध की प्रतिज्ञा के लिये बाध्य करता है ।

व्यक्ति के विचार और कार्य में प्रायः एकरूपता दृष्टिगोचर होती है । मनुष्य जैसा विचार करता है, वैसे ही कार्यों की अपेक्षा उससे होती है । अतः व्यक्ति के कार्य भी उसके व्यक्तित्व के अभिव्यंजक हैं । प्रेस्थ एक महत्वाकांक्षी व्यक्ति है, उसकी प्राप्ति में सहायक वस्तु के " अतिरिक्त संसार की अन्य किसी वस्तु का उसके लिये कोई महत्त्व नहीं । उसकी महत्वा-कांक्षा की पूर्ति में सीरो सहायक हो सकती है, अतः वह अपने पुत्र को उसके साथ विवाह के लिये बाध्य करता है और दिव्या भुक्तावशिष्ट की भाँति भुला दी जाती है । इसी प्रकार रूपलिप्सु मणिबंध मिश्र से नीलूफर को लाने के बाद वेणी को देखता है, तो उसे अपने प्रासाद में ले जाता है । अधिकार की

१ दिव्या, पृ० १७

२ वही

३ काल भैरव, पृ० ८०

लालसा उसे सैन्य-बल पर सम्राट् बना देती है। जीवन में मीरा का कृष्ण-प्राप्ति का विचार उसे द्वारकाधीश में विलीन करवाता है। कनकसेन की शालीनता उससे शत्रु की अनुपस्थिति में उसके परिवार और उसकी प्रजा का संरक्षण करवाती है। इस प्रकार पात्रों के कार्य वास्तव में उनके चरित्र के अच्छे परिचायक हैं।

चरित्र-चित्रण की उपर्युक्त अवस्थाओं में इस वर्ग के लेखकों ने वर्णनात्मक शैली का यथेष्ट प्रयोग किया है। इसके साथ ही उपन्यास के पात्रों में सजीवता और मनोरमता की सृष्टि के लिये नाट्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों का भी उपयोग किया गया है, जो उनके चारित्रिक उन्मेष में भी सहायक होती हैं। जीवन के अनुभवों से त्रस्त दिव्या को कहा गया मारिश का कथन यहां द्रष्टव्य है — " भद्रे, जीवन का कोई अनुभव स्थायी और चिरन्तन नहीं। जीवन की स्थिति समय में है और समय प्रवाह है। प्रवाह में साधु-असाधु, प्रिय-अप्रिय सभी कुछ आता है। प्रवाह का यह क्रम ही सृष्टि और प्रकृति की नित्यता है। जीवन के प्रवाह में एक समय असाधु, अप्रिय अनुभव आया, इसलिये उस प्रवाह से विरक्त होकर जीवन की तृष्णा को तृप्त न करना केवल हठ है। "[1] मारिश का उक्त कथन वास्तव में नहां जीवन में नई चेतना का संदेश लिये हुए है, वहां उसकी सहज बोधगम्यता उक्ति की रमणीयता भी प्रस्तुत करती है। " काल भैरव " में कनक सेन और सोहनी अंतिम कथोपकथन तो पाठक पर अपना अमिट प्रभाव छोड जाता है। गाधवी से सोमनाथ जाते कनकसेन को रोक कर सोहनी पिता की इच्छानुसार उसे नीलमणि देने के बाद कहती - " महाराज नाग संधार के कुटुम्ब का और गाधवी नगरी का यह वर्मल (नजराना) अपनी माता को आज पहुंचा दीजिये। " कहते हुए रक्तसनी एक गठरी सोहनी ने कनकसेन को दी। इसमें नाग संधार का मस्तक था। देख वह विस्मित हो गया और मस्तक उसके हाथ से नीचे जा गिरा। " यह,

---

१ दिव्या, पृ० १६२

यह, तुम लाई ? " [1] " मेरे पिता की आज्ञा, काटा भी मैंने है, लाई भी मैं हूं। अभी आप नाग संघार की कन्या को नहीं जानते, महाराज। " सोहनी का यह कथोपकथन बहुत मर्मस्पर्शी और उसके तथा उसके पिता के उत्सर्ग और कृतज्ञता की अभिव्यक्ति करता है। इसी प्रकार कनकसेन और नाग, यवनाचार्य और शंभु बेगडो, " दिव्या " में पृथुसेन और दिव्या, दिव्या और मारिश, तथा मीरा और कुमार भोज एवं मीरा तथा कृष्णचरण आदि के कथोपकथन कथावस्तु में सजीवता भी उत्पन्न करते हैं, और सम्बद्ध पात्रों के चरित्र का भी उद्घाटन करते हैं।

नाटकीय शैली के साथ ही पात्रों की मनःस्थिति का निरूपण करने के लिये मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का भी प्रयोग किया गया है। " बाला जोगण " में प्रार्थना, भजन और कीर्तन के उपरांत भी मीरां की मा का निधन उसके मन में भजन-प्रार्थना के विषय में अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न कर देता है। दूदाजी का सांसारिक घटनाओं के मूल में ईश्वरेच्छा की सर्वोपरिता का भाव उसे आश्वस्त करता है। इसी प्रकार शाकुल-जननी धाय-दासी द्वारा (दिव्या) का अपने स्वामी के अत्याचारों से पीडित शाकुल को लेकर अभिव्यक्त विश्लेषण उसके हृदय की पीडा को मुखर कर देता है। पृथुसेन द्वारा उपेक्षित सगर्भा दिव्या तथा सीरो द्वारा प्रताडित पृथुसेन के द्वन्द्वात्मक भावों की अभिव्यक्ति भी काफी प्रभावशाली रूप में हुई है।

इस प्रकार उपर्युक्त विविध पद्धतियों का अपनी अपनी रचनाओं में यथावश्यक उपयोग कर लेखकों ने अपने उपन्यासों के पात्रों का बहुत ही जीवंत और प्रभावशाली चरित्र-चित्रण किया है। उनके साथ पाठकों का

---

१ काल भैरव, पृ० १२५

सहज अपनत्व लेखक की सफल चरित्र-सृष्टि का द्योतक है। ऐसे पात्र वास्तव में पाठकों के मन पर अपना अक्षुण्ण प्रभाव छोड़ जाते हैं।

इन उपन्यासों के पात्रों के चरित्र-चित्रण में कुछ एक त्रुटियां भी दृष्टिगोचर हुई हैं। जिनके सम्बन्ध में हम यथास्थान इंगित कर आये हैं। कापालिक आचार्य रुद्र राशि की जलसमाधि युक्ति संगत और प्रतीतिकर नहीं लगती। सक्कर बेलीम जैसा जन साधारण सोमनाथ के नाम पर अपने शारीरिक पुरुषार्थ से संमोहन को विफल करने में जब समर्थ हो सकता है, तो सर्वतंत्र विद् रुद्रराशि ने ऐसी अवांछनीय प्रक्रिया को जान कर भी क्यों नहीं रोका ? लगता है, लेखक ने रुद्रराशि को यों ही जल-समाधि लिवा दी है। वेणी का चरित्र भी कुछ ऐसी ही अस्वाभाविकता से युक्त है।

उपर्युक्त पात्रों के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है, कि हिन्दी के " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " उपन्यासों में पात्र-सृष्टि लेखकों के सिद्धान्त प्रतिपादन को लक्ष्य कर प्रस्तुत की गई है। गुजराती के उपन्यासों की पात्र सृष्टि अपने सर्व सामान्य रूप में दृष्टिगत होती है। पुरुष पात्रों में आर्य मारिश, विल्लिभितर, दूदाजी, भोजसिंह, कनकसेन, यवनाचार्य, और सक्कर बेलीम तथा स्त्री पात्रों में दिव्या, राज-कुमारी चंद्रा, मीरा, सोहनी संधार और पल्लवी आदि के चरित्र सक्षम, जीवंत और उन्नायक हैं।

निष्कर्ष :

हिन्दी के कल्पनाप्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों की पात्र-सृष्टि लेखकों द्वारा अपने समाजवादी दृष्टिकोण को लक्ष्य कर प्रस्तुत की गई है। उनमें आज के समाज के से शोषक और शोषित वर्ग पूर्णतया प्रतिबिम्बित हैं।

" दिव्या " और " मुर्दों का टीला " का अभिजात वर्ग और श्रेष्ठि वर्ग तत्युगीन शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनकी सेना तथा राजकीय पुरुष उनके द्वारा किये जाने वाले शोषण के माध्यम हैं। वहां की प्रजा, दासवर्ग और नारी शोषित वर्ग के रूप में चित्रित हैं। साथ ही समकालीन लोक-जीवन के भी इसमें सजीव चित्र वर्तमान हैं। " मुर्दों का टीला " में आरंभ में धनिकों के स्नानागार के विलासी-जीवन को व्यक्त कर आर्यों के आक्रमण के समय तो मणिबंध के सैन्य-शक्ति का दुरुपयोग करने पर महानगर और कीकट की समस्त प्रजा को विद्रोही के रूप में चित्रित किया गया है। विद्रोहियों को प्राणदंड के द्वारा शोषकों के अत्याचार की चरम परिणति भी यहां प्रस्तुत की गई है। इस प्रकार लेखकों ने अपने दृष्टिकोण के अनुसार अपनी पात्र सृष्टि द्वारा (मानवजीवन को समग्र रूप में व्यक्त किया है।

गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्र मानव-जीवन के एक निश्चित अंश को ही प्रकट करते हैं। " वाला-नोगण " के पात्र पृष्ठ भूमि के रूप में कुछ सामाजिक और राजनीतिक जीवन को ही स्पर्श करते हैं। मीरा, रैदास और साऊद्दोला भक्ति-भावना को प्रकट करते हैं। " काल भैरव " समुद्र तटवर्ती प्रदेश से सम्बद्ध है अतः वहां के सभी पात्र सामुद्रिक साहसी जीवन के धनी हैं, नाग, कमकसेन, शंभु वेगडो, अनंत चावडा, सक्कर बैलीस आदि राजा, अग्रणी और सैनिक होते हुए भी समुद्री जीवन के साहसी सुभट हैं। वहां की प्रजा में भी युद्ध के समय उत्साही जीवन का स्पंदन है। रुद्रराशि-प्रभृति वहां के लोगों की अघोर पंथी उपासना व्यक्त करते हैं। इस प्रकार काल भैरव के पात्र एक प्रदेश विशेष का व्यापक जीवन प्रस्तुत करते हैं।

कथोपकथन :

प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में कथोपकथन अपने उसी रूप में दिखाई देता है, जैसा विवेचित उपन्यासों के अध्ययन में हम उसे देख आये हैं।

जन साधारण से सम्बद्ध कथोपकथन उनकी अपनी सरल और व्यावहारिक भाषा में है, तो वरिष्ठ और अभिजात कोटि के पात्र परिष्कृत और सुसंस्कृत भाषा का प्रयोग करते दृष्टिगत होते हैं। पात्रों के भाव और उनकी परिस्थितियां उनके वार्तालाप में प्रतिबिम्बित हो कथोपकथन के स्वरूप को एक नया ही वैशिष्ट्य प्रदान करते हैं, तो कहीं विविध विषयों पर विचार-विमर्श द्वारा एवं अपनी प्रतिक्रियाओं द्वारा पात्रों के चारित्रिक उन्मेष में अपना योगदान देता हुआ दृष्टिगत होता है।

" बालाजोगण " में शस्त्राभ्यास करती हुई मीरा से कृष्ण-चरण कहता है - " तू तो शस्त्राभ्यास करने लगी है, पूजा सेवा सभी मुझे सौंप दी। " मीरा उसका प्रत्युत्तर देती है, " वहां भी मेरे गिरधर लाल आते हैं। मैं तीर का निशाना लगाती हूं और सामने गिरधर लाल की आंख दिखाई देती है। मैं तीर फेंकती हूं और कहती हूं, प्रभो जल जगत के स्वामी, यह तीर नहीं अंजन शलाका है। नहीं हो, तो उसे बना लेना, इसी द्वारा मैं प्रभु की आंखमें सुरमा आंजती हूं। तीर ठीक लक्ष्य वेध करता है और प्रभु की अंजन अंजी आंख वहां दिखाई देती है।[1] मीरा के भक्त साथी कृष्णचरण और मीरा का यह कथोपकथन बहुत ही सरल और भक्तिपूर्ण है भी चाहे वरिष्ठ वर्ग के पात्रों में इसके सहज और पात्र एवं परिस्थिति के अनुरूप है।

पात्र और परिस्थिति के अनुसार इसके परिवर्तित स्वरूप का उदाहरण देखिये दिव्या के सम्मुख दार्शनिक मूर्तिकार आर्य मारिश के अपने अंतिम कथन में — " मारिश देवी को राजप्रासाद में महादेवी का आसन अर्पण नहीं कर सकता। मारिश देवी को निर्वाण के मिथ्या चिरन्तन सुख का आश्वासन नहीं दे सकता। वह संसार के

१ बाल जोगण, पृ० ११२

सुख-दुःख अनुभव करता है। अनुभूति और विचार ही उसकी शक्ति है। उस अनुभूति का ही आदान-प्रदान वह देवी से कर सकता है। वह धूलि धूसरित मार्ग का पथिक है। उस मार्ग पर देवी के नारीत्व की कामना में वह अपना पुरुषत्व अर्पण करता है। वह आश्रय का आदान-प्रदान चाहता है। वह नश्वर जीवन में संतोष की अनुभूति दे सकता है। - - - संतति की परंपरा के रूप में मानव की अमरता दे सकता है।[1] मारिश का यह कथन दार्शनिक की सी परिष्कृत भाषा और विचाराभिव्यक्ति से पूर्ण है। मीरा के कथोपकथन की तुलना में यह भाषा और कथ्य की दृष्टि से एक भिन्न ही स्वरूप प्रस्तुत करता है, किन्तु फिर भी वह प्रसादन तत्त्व से युक्त है।

कथावस्तु को गतिशीलता प्रदान करने में कथोपकथन का योगदान बहुत ही रोचक और प्रभावशाली रहा है। " दिव्या " में कथावस्तु का आरंभ ही प्रार्थी पृथुसेन के गणपति से युद्ध-कौशल सम्बन्धी निर्णय के विषय में निवेदन और शिविका प्रसंग वाले कथोपकथन से होता है। धर्मस्थ प्रासाद में न्यायार्थ निवेदन के लिये उपस्थित पृथुसेन के साथ दिव्या के कथोपकथन पृथुसेन के प्रति उसके आकर्षण, अनुराग और आत्म-समर्पण की ओर उसे ले जाते हैं। प्रेस्थ-पृथुसेन, एवं पृथुसेन-सीरो के कथोपकथन दिव्या की उपेक्षा में परिणत होने के कारण उसे दास्य जीवन के मार्ग पर ला उपस्थित करते हैं। चक्रधर पुरोहित के यहां वृद्ध दासी लोमा और दारा (दिव्या) के कथोपकथन एवं संघ स्थविर तथा दारा का कथोपकथन उसे यमुना में प्राणान्त करने को बाध्य करते हैं। मल्लिका के उसे जनपद कल्याणी के रूप में अभिषिक्त करने के लिये सागल ले आने और गण के प्रतिवाद करने पर पान्थशाला में स्थित दिव्या के साथ आचार्य रुद्रधीर, भिक्षु पृथुसेन और आर्य मारिश के कथोपकथन से उपन्यास का अंत होता है। इसी प्रकार " काल भैरव " में अघोरनाथ रुद्रराशि और अघोर

---

१ दिव्या, पृ० २१८

भक्तों का कथोपकथन, अघोर पंथी साधु और कनकसेन का रानिता के संरक्षण सम्बन्धी कथोपकथन कथा को नाग-कनकसेन-युद्ध की ओर मोड़ देता है। द्वीप में कनकसेन के तीनों जहाजों के फंस जाने पर कनकसेन और अनंत चावड़ा का कथोपकथन अनंत की शक्ति के लिये मार्ग उन्मुक्त कर देता है, जिससे उसकी पराजय विजय में बदल जाती है। गाधवी बंदर पर नाग-कन्या सोहनी और कनकसेन तथा नाग का कनकसेन द्वारा गाधवी संरक्षण सम्बन्धी कथोपकथन नाग के आत्मोत्सर्ग द्वारा कथा को अपने अंत की ओर ले जाता है। इसी प्रकार " मुर्दों का टीला " एवं " काला जोगण " में भी कथोपकथन कथावस्तु को गतिशीलता प्रदान करने में सफल रहा है।

पात्रों के चारित्रिक विकास में कथोपकथन की उपयोगिता सम्बन्धी विवेचन प्रस्तुत अध्याय के चरित्र-चित्रण के अन्तर्गत कर आये हैं। उसके अतिरिक्त भी दिव्या और मारिश, प्रेस्थ-पृथुसेन, रुद्रधीर-अंशुमाला, के कथोपकथन तथा कनकसेन और नाग, सोहनी और कनकसेन, पल्लवी और अनन्त चावड़ा, मीरा और मोज आदि के कथोपकथन सम्बद्ध पात्रों के विविध चारित्रिक पक्षों को उभारते हैं। शिशु शाकुल के बेचे जाने पर दिव्या का तथा पिता के जहाजों के भ्रम में कनक सेन के जहाजों पर जा पहुंचने और पिता की अनुपस्थिति में भ गाधवी की अरक्षित स्थिति पर सोहनी के अन्तर्द्वन्द्व के विश्लेषण भी बड़े सजीव हैं।

इस प्रकार अन्य पूर्ववर्ती अध्यायों की भांति प्रस्तुत अध्याय के ऐतिहासिक उपन्यासों में भी पात्र और परिस्थिति के अनुसार बदलते कथोपकथन के स्वरूप एवं कथावस्तु में सजीवता और गतिशीलता लाने के ~~लिये~~ लिये एवं चारित्रिक उन्मेष के लिये इसका उपयोग भी सम्यक् रूप में दृष्टिगत होता है।

सामान्यतया प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में कथोपकथन की एकरूपता दृष्टिगोचर होती है। फिर भी " दिव्या " में मारिश के लोकायत दर्शन से

पूर्ण दिव्या के साथ के कथोपकथन एवं " मुर्दों का टीला " में पागल विश्वजित के व्यंग्य और कटाक्ष युक्त कथोपकथन पाठक के मन पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ जाते हैं। गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में से " काल भैरव " के नाग और कनक सेन के पैने संवाद भी इसी कोटि के हैं। वे बहुत ही सशक्त और प्रभावात्मक हैं।

वातावरण :

कल्पनाप्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में भी वातावरण का महत्त्व पूर्ववर्ती अध्याय में प्रस्तुत वातावरण की अपेक्षा किसी प्रकार कम नहीं कहा जा सकता है। वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखक को वातावरण अपने ऐतिहासिक रूप में प्राप्य होता है, किन्तु कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में उसे घटनाओं, और पात्रों के साथ वातावरण की सृष्टि भी कल्पना के सहारे ही करनी पड़ती है और वह भी इस दृष्टि से कि वह पाठक को सम्बद्ध युग के वातावरण की प्रतीति करा सके। इन उपन्यासों में भी वातावरण की सृष्टि के मूल में लेखकों के समक्ष अपने सिद्धान्तगत और कलागत उद्देश्य हैं। इन्हीं के अनुरूप यहां वातावरण का स्वरूप और उसका उपयोग दृष्टिगत होता है।

हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों में, " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " दोनों सिद्धान्तगत उद्देश्य को लेकर लिखे गये हैं। " दिव्या " में लेखक अपने मार्क्सवादी दृष्टिकोण के अनुसार " व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र " प्रस्तुत करना चाहता है। वह मारिश से कहलवाता है जीवन की प्रवृत्ति प्रबल और असंदिग्ध सत्य है।[२] वस्तुतः

१ दिव्या, पृ० १७

२ वही

जिजीविषा व्यक्ति को मर्मांतक आघातों को सहन करने के उपरांत भी उसे जीवन के मार्ग पर अग्रसर होने को प्रेरित ही नहीं, अपितु बाध्य करती है। प्रवृत्ति का शाश्वत क्रम ही जीवन है। उपन्यास में कल्पना के सहारे चित्रित समाज की पृष्ठभूमि का पर उत्थान-पतन से युक्त विविध घटनाओं के घात-प्रतिघात को सहन कर चलनेवाली दिव्या (व्यक्ति) के माध्यम से यह जीवन की प्रवृत्ति और उसकी प्रबलता का प्रभावशाली निरूपण करता है। पुष्पसेन के सेनापति से परिवर्तित परिस्थितियों में बौद्धभिक्षु बनना एवं उपन्यास के अंतिम दृश्य में दिव्या को बौद्ध धर्म में दीक्षित करने के लिये पहुंच जाना, तथा रुद्रधीर का निर्वासन से लौट कर सत्ता-परिवर्तन द्वारा पुनः पितृपद (गण परिषद संवाहक) पाने के लिये प्रयत्न करना और उसे पा लेना, व्यक्ति की प्रवृत्ति की प्रबलता के ही परिचायक हैं।

उपन्यास में अंकित अग्रहार कुलों की विलासिता, दासों एवं नारी की गर्हणीय अवस्था, द्वारा सामाजिक स्थिति, सेना की अव्यवस्था, राज्य कोष में धनाभाव, बलपूर्वक युद्ध-बलि ग्रहण करना आदि के द्वारा राजनीतिक स्थिति एवं बौद्ध धर्म की व्यापकता, ब्राह्मण धर्म का ह्रास, तथा मनोरंजन के लिये नृत्योत्सवों का आयोजन आदि के द्वारा धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का तथा युग के परिवेश का सुंदर चित्रण किया गया है। वेश भूषा, संबोधन, शिष्टाचार एवं जीवन के सामान्य व्यवहार से सम्बन्धित शब्दावली के प्रयोग एवं अपने कल्पना-वैभव से लेखक ने कृति के वातावरण को प्रतीतिकर बनाने का प्रशस्य प्रयत्न किया है।

" मुर्दों का टीला " में डा० रांगेय राघव अपने प्रगतिवादी दृष्टिकोण से यह प्रतिपादित करना चाहते हैं कि धन और अधिकार सब बुराइयों के मूल कारण हैं।[1] धन के लिये व्यक्ति पतित होता है, शोषण

---

1 मुर्दों का टीला, पृ० २२७

करता है। लेखक कल्पना के विनियोजन से यह प्रस्तुत करता है कि मणिबंध धन के लिये स्वामी-वध कर सार्थाधिपति बनता है। अपरिमेय धन उसे विलासी बनाता है। धन के बल पर वह मिश्र सुंदरी नीलूफर को महानगर लाता है, और शील की रक्षा के लिए कीकट से महानगर आई वेणी को अपने आवास में ले जाता है। धन उसे धन की और अपनी रक्षा के लिए सैन्य-शक्ति संचित कर सत्ता-प्राप्ति की ओर ले जाता है, जिसके बल पर वह उसके व्यवहार से क्रुद्ध विद्रोही प्रजा को कुचल कर स्वयं सम्राट् बन जाता है। मणिबंध, विश्वजित आमेन-रा, शोषक श्रेष्ठी वर्ग के पात्र हैं, जबकि नीलूफर, वेणी, विल्लिमिलूर, हेका, और अथाय, शोषित और दास वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वेणी का हरण, कीकट पर आर्यों के आक्रमण से पीडित द्रविडों के महानगर में सहायता-प्राप्ति के लिये प्रवेश और उन पर हुआ शक्ति-प्रयोग, इससे क्रुद्ध प्रजा का विद्रोह, जैसी घटनाएं धन और अधिकार के दुरुपयोग की स्थितियां चित्रित करते हैं। संक्षेप में, युगीन उपलब्ध अवशेषों के आधार पर लेखक ने अपनी कल्पना का समीचीन उपयोग कर तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण का निरूपण करने में अपने कौशल का सुंदर परिचय दिया है।

" बाला-नोगण " में लेखक मीरा के व्यक्तित्व के विश्लेषण के अनुरूप वातावरण का निरूपण करता है। सोलहवीं शताब्दी में कान्हवा-मैदान के बाबर-संग्राम सिंह युद्ध में बाबर की विजय से दिल्ली की सर्वोपरिता तथा गुजरात और मालवा की मुस्लिम सल्तनतों का मेवाड के साथ युद्ध और मेवाड़ विजय तत्कालीन राजनीतिक संघर्षपूर्ण वातावरण को अभिव्यंजित करते हैं। युद्धों में शौर्य-प्रदर्शन और नर-संहार के काल में, लोक-मानस में भक्ति-भावना का प्रवाह क भी विद्यमान था। ऐसी पृष्ठ भूमिका में कृष्ण-भक्त दूदाजी के संस्कारों से मीरां में कृष्ण-भक्ति का संचार और उसका प्रभावात्मक निरूपण

लेखक का अभिष्ट लक्ष्य बन जाता है जिसे अपनी उर्वर कल्पना द्वारा वह कृति में प्रस्तुत करता है ।

बाल्यावस्था में कृष्णभक्त दूदाजी के साथ मीरा और जयमल की बातों में एवं कृष्णलीला सम्बन्धी प्रश्नोत्तरी में मीरा के कृष्ण-भक्ति के संस्कार की प्राप्ति ; उसकी तल्लीनता की स्थिति में स्फुटित - " बोल मा, बोल मा, बोल मा, रे राधाकृष्ण बिना बीजू बोल मा " जैसे पदों में उसकी भक्ति का पल्लवन, शस्त्राभ्यास में भी कृष्ण-संगति की प्रतीति, ध्यानावस्था में मुरली श्रवण पर " वागे छे रे, वागे छे, वृन्दावन मुरली वागे छे " में सहज काव्याभिव्यक्ति, कृष्णमयता के कारण वयःसंधि से भी निर्लिप्तता, विवाहोपरांत उसकी अविरल भक्ति से उसके विरोधियों का भी उसके अनुयायी होना, राणा द्वारा उस पर प्रयुक्त नाग और विष के निष्प्रभाव होने के चमत्कार, चित्तोड-निर्वासन पर उसकी पूर्व यात्रा का एक यात्रा संघ में बदल जाना, व्रजभूमि में उसके पहुंचने पर व्रजभूमि-प्रवेशोत्सव, व्रज में उसके पद पद पर भजन-कीर्तन की धूम, उसकी गीत माधुरी से कृष्णमय व्रजमंडल का मीरामय हो जाना आदि के चित्रण से लेखक मीरा की कृष्ण-भक्ति और युगीन परिवेश पर पड़े उसके प्रभाव का निरूपण करने में सर्वथा सफल रहा है ।

" काल भैरव " समुद्री परिवेश से सम्बद्ध उपन्यास है । इसमें लेखक समुद्री युद्ध के वातावरण का निरूपण रोमांचक वर्णन एवं कथोपकथन के माध्यम से प्रस्तुत करता है । राखिता को रुद्रराशि के आदेशानुसार कनक सेन के अपने संरक्षण में लेने के कारण नाग के युद्ध की चुनौती पर प्रजा में आतंक, कनक सेन और यवनाचार्य के प्रोत्साहन से शत्रु का सामना करने की उसकी कठिबद्धता, पल्लवी द्वारा मंदिर के शिखर से शत्रु के जहाजों का निरीक्षण, युद्ध पूर्व नाग द्वारा काल भैरव की पूजा, एवं तदनन्तर समुद्र की अनंत जलराशि

में अपने अपने जहाजों पर आरूढ हो, बाण और अग्नि वर्षा द्वारा शत्रु के जहाजों पर आक्रमण आदि के रोमांचक वर्णन द्वारा समुद्री युद्ध का जीवंत चित्रण प्रस्तुत किया गया है। नाग द्वारा अघोरनाथ रुद्रराशि की सहायता से अघोर-पूजन और शंकर राशि की सहायता से काल-भैरव की पूजा के दृश्यांकन तत्कालीन वाममार्गी (कापालिकों की) अघोर पंथियों की उपासना पद्धति का भी चित्रण प्राप्य है। इस प्रकार लेखक यहां राजनीतिक और धार्मिक परिस्थितियों के चित्रण के सहारे ही युगीन परिवेश का निरूपण करता है।

कुछेक स्थलों पर युद्ध सम्बन्धी वर्णन अनुपयुक्त भी लगते हैं। समुद्री युद्ध के बाद दूसरे दिन प्रातःकाल में कनक सेन के पराक्रम की जो लेखक प्रशंसा कर रहा है, वह यहां द्रष्टव्य है — " कनकसेन महाराज ने तो पराक्रम की हद कर दी। जहां उनकी तलवार फिरती, वहां केवल हवा में ही मानव-मस्तक उडते हुए दिखाई देते। "[1] लेखक यहां भूल बैठा है कि यह स्थल वर्ती युद्ध नहीं, समुद्री युद्ध है, जहां अपने जहाजों पर रह कर ही युद्ध लडा जाता है और किसी जहाज के विजित हो जाने पर इस प्रकार खड्ग के प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती।

तुलना और निष्कर्ष :

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दी के दोनों उपन्यास सोद्देश्य हैं, और अपने सिद्धान्त-प्रतिपादन के लिये लिखे गये हैं, जिनमें लेखक अपनी-अपनी घटना और पात्र-विनियोजन की क्रिया से सफल हैं। दोनों ही कृतियों में युगीन राजनीतिक सामाजिक, और सांस्कृतिक वातावरण का निरूपण करने में लेखक सफल रहे हैं।

१ काल भैरव, पृ० २०५

गुजराती के दोनों उपन्यासों में वातावरण का निरूपण कलागत उद्देश्य को लेकर प्रस्तुत किया गया है। इनमें से " बाला जोगण " में य युगीन राजनीतिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक वातावरण का जीवंत और प्रभावशाली निरूपण हुआ है। कृति की समाप्ति के बाद भी कृष्ण-भक्ति की धूम के दृश्य पाठकों की स्मृति में उभराते रहते हैं। " काल भैरव " अपने समय के राजनीतिक और धार्मिक वातावरण का निरूपण करता है।

हिन्दी के दोनों उपन्यासों में लेखक सुदूर अतीत की ऐतिहासिक कल्पना कर तत्युगीन वातावरण की प्रतीति कराने में सफल रहे हैं। " बाला जोगण " में प्रस्तुत वातावरण तो यथार्थता के संनिकट है ही। केवल " काल भैरव " इस दृष्टि से इतनी सशक्त उपन्यास नहीं कहा जा सकता।

भाषा-शैली :

कल्पनाप्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा-शैली के अनुशीलन के लिये हम वही आधार ग्रहण कर रहे हैं, जिसे पूर्ववर्ती अध्यायों में ग्रहण किया गया है।

: भाषा में कथावस्तु के वहन की क्षमता :

प्रस्तुत वर्ग के हिन्दी और गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखकों ने कथावस्तु, पात्र, (बाला जोगण के अतिरिक्त) एवं परिवेश का सर्जन कल्पना के सहारे किया है। यह लेखक के भाषा-कौशल और उसके सम्यक् उपयोग पर निर्भर करता है कि वह कल्पना-प्रसूत तत्त्वों के विषय में कृति का अध्ययन करते समय य पाठकों को उनके ऐतिहासिक होने की प्रतीति किस सीमा तक करा सकता है। इस वर्ग के उपन्यासों के अध्ययन के आधार पर और उनकी लोकप्रियता के आधार पर यह जा सकता है कि इनमें प्रयुक्त भाषा अपने

वस्तु-वहन के अपेक्षित लक्ष्य में सर्वथा सफल रही है, जिसकी प्रतीति परवर्ती विवेचन से की जा सकती है।

विवेच्य उपन्यासों में वस्तु-वर्णन, पात्रों के आकृति वर्णन तथा रेखांकन में भाषा का वह जीवंत और चित्रोपम रूप दृष्टि गोचर होता है कि पाठक कथावस्तु में लीन हो लेखक की लेखनी के साथ-साथ बढ़ता चला जाता है। " दिव्या " के आरंभ में ही गणपति मिथोद्रस के सम्मुख प्रतिस्पर्धियों के आकर निवेदन का दृश्यांकन यहां उल्लेखनीय है। " छः युवक सैनिक वेश में शरीर पर वर्म और सिर पर शिरस्त्राण पहने, कंधे पर धनुष-तूणीर बांधे, कमर में खड्ग लटकाये, हाथ में माला लिये वेदी पर आये। युवकों ने भद्र के गण राज्य के गणपति और महासेनापति वयोवृद्ध मिथोद्रस के आसन के सम्मुख उपस्थित होकर नासिका के सम्मुख अपनी खड्ग सीधी कर मस्तक झुका कर निवेदन किया — " भद्र के श गणराज्य की सागल नगरी का निवासी, मैं अमुक नाम, अमुक पुत्र, शस्त्र-शास्त्र की शिक्षा-प्राप्त कर, मुझे सैनिक-सेवा कार्य में मेरे योग्य पद प्रदान करे। "[1] यहां लेखक ने प्राचीन युग के शस्त्रों का प्रयोग करने वाले सैनिकों को उनकी सुसज्ज अवस्था में प्रस्तुत कर, अपने परिचय में प्रयुक्त शब्दावली से उनके गणकालीन सैनिक होने प्रतीति करा देने का प्रयत्न किया है। " काल भैरव " के आरम्भ में भी लेखक की भाषा में सरलता के साथ कौतूहल का एक अद्भुत रूप दृष्टिगत होता है। उपन्यास का पहला ही वाक्य - " पूरे छः हाथ ऊंचा और दो हाथ चौडा, वह मनुष्य था " —, " पाठक की कुतूहल-वृत्ति को जागृत कर देता है। आगे चल कर वह लिखता है - " पहाड जैसा शरीर और हाथी जैसी ताकत और मैग्नेटिक नीडल जैसी यवनाचार्य के प्रति अविचल भक्ति " से सम्पन्न यह

१ दिव्या, पृ० २

व्यक्ति चावडों की सभा में अपना स्थान ग्रहण किये बैठा था । " प्रस्तुत वर्णन में पाठक को सक्कर बेलीम के प्राचीन काल के मीमकाय यवन का एक अद्भुत चित्र मिलता है । इसी प्रकार " मुर्दों का टीला " में प्रातःकाल के समय मणिबंध का महानगर के सिंधु तट पर अवतरण और " बाला जोगण " में दूदानी का संध्याकालीन प्राकृतिक सुषमा का अवलोकन कर बीजल और तेजल के साथ पुत्र वधू के कुडकी गांव की ओर प्रस्थान जैसे कुतूहल पूर्ण वर्णन लेखकों के भाषा-कौशल के परिचायक हैं ।

उपन्यासों के कथावस्तु में इस प्रकार रोचकता उत्पन्न करने के उपरान्त लेखक कथा के पात्रों के शब्द-चित्र और प्रभावात्मक चित्र प्रस्तुत कर वस्तु को गतिशीलता प्रदान करता है । " मुर्दों का टीला " में महानगर के स्नानागार में रमण करने वाली सुन्दरियों का चित्र यहां उल्लेखनीय है - " महानगर की अनेक सुंदरियों का यौवन उच्छृंखल हो उठा था । उन्नत कुचकशों पर विभिन्न रंगों के वस्त्र बंधे थे । उनकी कटि पर झनझनाती मेखला बंधी थी । शिर के जूडे ऊपर की ओर उठाकर बांधे गये थे । कानों में लटकते मुक्ता के गुच्छे उनके प्रत्येक पग पर झूमने लगते थे । उनके बडे बडे नयनों में कितना उन्माद था, कितनी विशुध छलना थी, इसे स्वयं महानगर की विराट अट्टालिकाएं भी पढ सकने में असमर्थ थीं । " [1] यहां स्नान-वेष भूषा में मोहन जो दडों के समय की सुन्दरियों के उच्छृंखल यौवन का आश्चर्यजनक चित्र प्रस्तुत किया गया है । ऐसे ही पात्रों के आकर्षक व सुंदर शब्द-चित्र और रेखांकन, जिनकी सूची चरित्र-चित्रण में प्रस्तुत कर आये हैं, " दिव्या " " बाला जोगण " और " काल भैरव " में विद्यमान हैं जो उनके भाषा-सामर्थ्य को इंगित करते हैं ।

पात्रों के शब्द-चित्र के साथ उनके प्रभावात्मक चित्र भी एक

---

1 मुर्दों का टीला, पृ० १८

ओर कृति में रस-सृष्टि का कार्य करते हैं, तो दूसरे ओर भाषा-कौशल को व्यंजित करते हैं। " काल भैरव " में राजा कुमार कनक सेन की जन सभा में राखिता के सौन्दर्य का प्रभावात्मक चित्रण यहां द्रष्टव्य है -- " सारी सभा उस नारी को देख कर स्तब्ध हो गई -- क्या आकाश में से मेनका आई है ? क्या इन्द्र की रंभा पृथ्वी पर उतर आई है ? नारियां सुंदर होती हैं, यह सभी देखने वाले जानते हैं। किन्तु इस संसार में कोई स्त्री इतनी भी सुंदर हो सकती है, यह तो आज से पहले किसी को कल्पना में भी न था। "[1] यहां राखिता के अद्भुत सौन्दर्य की संदेह, अलंकार तथा लक्षणा शक्ति के द्वारा सुंदर अभिव्यक्ति की गई है। " बाला जोगण," " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " में मीरा, दिव्या, नीलूमन्नर, वेणी के चरित्र के कई भावात्मक चित्रण प्राप्य हैं, जो भाषा के सामर्थ्य के परिचायक हैं।

ऊपरिनिर्दिष्ट वस्तु-वर्णन और चित्रांकन के साथ ही वातावरण के निरूपण में भी भाषा की क्षमता का स्वरूप देखा जा सकता है। दार्वराज केन्द्रस के आक्रमण का सामना करने के लिये प्रजा के युद्ध बलि लेने पर लोक-मानस का चित्र एक वृद्ध मद्यप के शब्दों में यहां ध्वनित है - " मैं दिन भर उग्र ताप में बैठ कर तलवारें गढता हूं, वही तलवार हाथ में लेकर, राजपुरुष मेरे पुत्र को बलात् सैन्यदल में हांक ले गये। मेरा पुत्र केन्द्रस के खड्ग का प्रहार सहने दार्व जायगा, और याजक, पुरोहित मेरे दिये राज बलि के द्रव्य से मंत्रपूत सुरापान कर, बलि के मांस का भोजन कर, मंत्र-पाठ द्वारा रक्षक देवता का आह्वान करेगा। महायोद्धा सामन्त गौर और कृष्ण वर्ण दासियों को अंक में लेकर शय्यारूढ होने का पराक्रम करेगा। और खड्ग के प्रहार से कांपता हुआ मेरा पुत्र कायर होगा। हाय, इससे तो वह श्रमण बन दीर्घ जीवी होता

१ काल भैरव, पृ० १४२

तो अच्छा होता । "[1] यहाँ बुद्ध के आक्रोश में तत्युगीन दूषित एवं शोषक राजनीति, तथा उससे सम्बन्धित वर्ग की वैधानिक भ्रष्टता का नग्न चित्र स्फुटित होता है ।

२ शैली के वैविध्य का कृति के उत्कर्षापकर्ष में योगदान :

उपर्युक्त विवेचन में प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों से उद्धृत गद्यांशों में वर्णनात्मक शैली के कतिपय उदाहरण विद्यमान हैं । उपन्यास के विस्तृत फलक पर कहाँ क्या है, कैसा है, एवं कैसा होना चाहिये ; आदि कथ्य के सम्बन्ध में लेखक यथावश्यक वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करता है । प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में भी पूर्व निर्दिष्टानुसार इसका कुशल प्रयोग दृष्टिगत होता है । इसी प्रकार कथावस्तु में सहज स्वाभाविकता और रोचकता की सृष्टि के लिए नाट्यात्मक शैली का भी पर्याप्त रूप में प्रयोग किया गया है । प्रस्तुत अध्याय के "चरित्र-चित्रण " और " कथोपकथन " के विवेचन में नाट्यात्मक शैली के कतिपय उद्धरण, कथन, और विवेचन इसके सफल प्रयोग के परिचायक हैं ।

उपर्युक्त दोनों शैलियों के अतिरिक्त प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में विश्लेषणात्मक शैली के भी सुंदर प्रयोग दिखाई देते हैं । अपने शिशु की दारुण दशा पर शाकुल आकुल जननी दिव्या के अन्तर्द्वन्द्व का विश्लेषण यहाँ उल्लेखनीय है - " बौद्ध श्रमण कहते हैं - मनुष्य अपने कर्म से ही दुःख पाता है, परंतु मेरे बच्चे का क्या कर्म है ? अभीतो वह उत्पन्न ही हुआ है । उत्पन्न होने से पूर्व ही उसका कर्मफल फूट गया ? वह यह भी नहीं जानता कि किस कर्म का दंड भोग रहा है । हे देवता, अपना अपराध या दुष्कर्म जाने

१ दिव्या, पृ० ५४

बिना यह अबोध बालक दुष्कर्म से बचने का कैसे निश्चय करे । यदि दुष्कर्म मैंने किया है, तो दंड और भोग के लिये प्रस्तुत हूं । मेरा पुत्र क्यों क्षुधा पीडित न हो ? "[1] यहां क्षुधार्त शिशु की दारुण अवस्था पर दिव्या के आकुल हृदय का मर्म-स्पर्शी विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है । इसी प्रकार " मुर्दों का टीला " धन के सम्बन्ध में मणिबन्ध का मनोविश्लेषण " काल भैरव " में असुर राज और कनकसेन जैसे शत्रुओं के सामने स्वयं को एवं गायत्री को अपने पिता की अनुपस्थिति अरक्षित पाकर सोहनी संघार का, तथा भजन-कीर्तन के उपरांत भी मा के निधन पर मीरा का मनो विश्लेषण इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं । अन्यत्र भी ऐसे कई उदाहरण कृतियों में विद्यमान हैं ।

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों के पात्र, उनका चरित्र और परिवेश उनके सम्बद्ध काल की प्रतीति करा सकें, इस लक्ष्य से विवेच्य उपन्यासों में प्राचीन काल की शब्दावली का प्रयोग किया गया है । " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " में इसका मुक्त प्रयोग हुआ है । श्री यशपाल ने तो पाठकों की सुविधा के लिये कृति के अन्त में उसके शब्दार्थ भी दिये हैं । " काल भैरव " में और " बाला जोगण " में भी कृति के युग की आवश्यक शब्दावली का प्रयोग किया गया है । उदाहरण के लिये " काल भैरव " में श्री आचार्य ने उपन्यास में प्रयुक्त प्राचीन तद्भव शब्दों के साथ ही कोष्ठ में उनके अर्थ दे दिये हैं - भंडन (साम्प्रदायिक संघर्ष), गवासन (म्लेच्छ) वारिक (मनोनीत अग्रणी) वर्यसक (वयस्क), प्रवहण (जहाज) वास्य (आवास की जगह), सवसिर (सामान्य जनसभा) आदि ।

इस प्रकार प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में भी भाषा पात्र और परिस्थिति के अनुरूप बदलती हुई, अपने सरल और समृद्ध रूप, शैली

---

1 दिव्या, पृ० १२२

वैविध्य, अलंकार-प्रयोग और युगीन शब्दावली के साथ अपने सामर्थ्य का परिचय देती है और कृति एवं कृतिकार के गौरव की अभिवृद्धि करती है ।

उद्देश्य और जीवन दर्शन :

ऐतिहासिक उपन्यासों के विविध उद्देश्यों का उल्लेख हम पूर्ववर्ती (पंचम) अध्याय में प्रस्तुत कर आये हैं । प्रस्तुत अध्याय के उपन्यासों में लेखकों द्वारा अंगीकृत उद्देश्य को लक्ष्य कर हम उन्हें निम्नांकित रूप में रख सकते हैं ।

१ अतीत के प्रति प्रेम और उसका पुनः पुनः संस्थापन करने वाले उपन्यास
२ अतीत की आधुनिक व्याख्या और उसके द्वारा वैयक्तिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति वाले उपन्यास ।

" बाला जोगण " और " काल भैरव " दोनों प्रथम कोटि के उद्देश्य को लिये हुए हैं । " बाला जोगण " में मीरा के जीवन सम्बन्धी तथ्यों में प्रवर्तित मतभेद के कारण उससे सम्बन्धित सामग्री का संकलन कर उसके व्यक्तित्व को निरूपित करना कृतिकार का उद्देश्य है । कृति के उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लेखक अपने उद्देश्य में सफल रहा है । इसके साथ ही मीरा से लौकिक काम-भावना और भक्त-काम-भावना के संबंध में पूछे प्रश्न के प्रत्युत्तर में भक्त के जीवन-दर्शन की भी सम्यक् अभिव्यक्ति प्रस्तुत की गई है :- (१) कामी का भोग इंद्रियाश्रित है, भक्त का इन्द्रियातीत, (२) वासना-तृप्ति के पश्चात् कामी का तन मन भोग विमुख हो जाता है । भक्त की वासना में तृप्ति नहीं, उसके आनंद की सीमा नहीं है । चिदानन्द का आनंद कृष्ण के साथ तादात्म्य का आनन्द है । काम के सम्पूर्ण शुद्धिकरण और ऊर्ध्वीकरण से साध्य भक्ति का अनवरत अनुसरण ही उसकी प्राप्ति का एक मार्ग है । " [1] यहां प्रश्न

१ बाला जोगण, पृ० १०९

के प्रत्युत्तर के अतिरिक्त मतन के लिये आवश्यक लौकिक व्यवहार की दिशा भी इंगित कर दी गई है ।

" काल भैरव " में लेखक सोम पट्टन के तटवर्ती प्रदेश में प्रचलित लोक-श्रुति के आधार पर कनक सेन और नाग की विस्मृत होने वाली गाथा को साहित्यिक अभिव्यक्ति द्वारा समाज के सम्मुख रखना चाहता है । कृति की लोकप्रियता और उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि लेखक अपने उद्देश्य में सफल रहा है । इसके साथ ही लेखक कनक सेन और नाग के माध्यम से सद् और असद् वृत्तियों के संघर्ष द्वारा पाठकों के सामने यह विचार प्रस्तुत करता है कि मानव का कल्याण सद्वृत्तियों के अनुसार जीवन-यापन एवं कर्तव्य पालन में है ।

हिन्दी के " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " द्वितीय प्रकार के उद्देश्य से युक्त हैं । " दिव्या " में भी यशपाल अपने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से बौद्धकालीन समाज की पृष्ठभूमि पर " व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र " पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता है । इसके मूल में अन्तर्निहित लक्ष्य की अभिव्यक्ति वह मारिश से करवाता है - " जीवन की प्रवृत्ति प्रबल और असंदिग्ध सत्य है । " [1] इसीके अनुरूप अभिजात कुलोत्पन्न कुमारी दिव्या को उत्थान-पतन से युक्त घटमाल से पारित कर वह अपनी लक्ष्य-सिद्धि में सफल रहता है । डा० रांगेय राघव " मुर्दों का टीला " में धन और अधिकार को सब बुराइयों का मूल कारण मानते हैं । उनका कथन है - " न स्त्री बुरी होती है, न पुरुष । धन बुरी वस्तु है, अधिकार बुरी वस्तु है । धन और अधिकार को ठीक कर दो, फिर संसार में कुछ भी बुरा

1 दिव्या, पृ० १७

नहीं है ।[1] " चरित्र चित्रण " और " वातावरण " के अन्तर्गत एतद्विषयक विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि श्रेष्ठि मणिबंध के आद्योपान्त चित्रण द्वारा लेखक अपने मत का सफलता के साथ प्रतिपादन कर सका है ।

तुलनात्मक विश्लेषण :

हिन्दी और गुजराती के कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में से " दिव्या ", " मुर्दों का टीला " और " काल-भैरव " में प्राचीन भारतीय परिवेश की कल्पना के आधार पर कथावस्तु का संगठन किया गया है, जब कि " बाला-जोगण " में सोलहवीं शताब्दी के आरंभिक काल की मीरा की जीवन गाथा प्रस्तुत है । प्रथम दो उपन्यासों में समाजवादी दृष्टिकोण से अपने सिद्धान्तों की स्थापना की गयी है । " काल भैरव " समुद्री जीवन से सम्बन्धित साहस-कथा है । " दिव्या " और " काल भैरव " का कथावस्तु संक्षिप्त और सुगठित है, " मुर्दों का टीला " और " बाला-जोगण " का विस्तृत वर्णनों के कारण कई स्थलों पर शैथिल्य-युक्त ।

" दिव्या " और " मुर्दों का टीला " के पात्र और उनका चरित्र-चित्रण समाजवादी दृष्टिकोण के अनुसार समग्र सामाजिक जीवन को व्यक्त करने वाले शोषक और शोषित वर्ग की विशेषताओं के अनुरूप है । गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्र अपने जीवन के सम्बद्ध अंश को ही प्रस्तुत करते हैं ।

हिन्दी के कल्पना-प्रधान उपन्यासों में लेखकों ने अपने सिद्धान्त-प्रतिपादन की दृष्टि से वातावरण का निरूपण किया है । सामन्ती वर्ग और श्रेष्ठि वर्ग अपने धन और अधिकार का प्रयोग अपने सुखभोग और धन-वृद्धि

१ मुर्दों का टीला, पृ० २२७

के लिए करता है। अतः इससे उत्पन्न प्रजा के शोषण और उत्पीडन की स्थितियों का इनमें जीवन्त चित्रण दृष्टिगत होता है। गुजराती के उपन्यासों में से " वाला-जोगण " में अपने लक्ष्य के अनुरूप मीरा की कृष्ण-भक्ति का एवं " काल-भैरव " में अघोर-उपासना और समुद्री-युद्ध का वातावरण निरूपित है।

इस वर्ग के हिन्दी और गुजराती के उपन्यासों में, जैसा कि नामाभिधान से स्पष्ट है, कल्पना का अपने लक्ष्य के अनुसार कथावस्तु, पात्र, तथा वातावरण के सर्जन में उन्मुक्त प्रयोग किया गया है।

किन्तु उद्देश्य और जीवनगत अभिव्यक्ति में पर्याप्त अन्तर है। प्रस्तुत वर्ग के हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास राजनीतिक सिद्धान्तों से प्रेरित होकर लिखे गये हैं, जब कि गुजराती के उपन्यास शुद्ध कलागत उद्देश्य से प्रेरित होकर। दूसरी उल्लेखनीय तथ्य यह है कि " दिव्या " और " मुर्दों का टीला " में उनके पात्रों द्वारा मानव-जीवन के व्यापक स्वरूप का प्रतिनिधित्व होता है। गुजराती के " वाला-जोगण " और " काल-भैरव " के पात्र जीवन के सम्बद्ध अंश को ही व्यक्त करते हैं।

तीसरे, हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास आधुनिक युग-बोध और सामाजिक यथार्थ की चेतना से सम्पृक्त हैं। उनमें, उनके ऐतिहासिक होते हुए भी हमारा वर्तमान, वर्तमान की समस्याएं, वर्तमान के प्रश्न प्रतिबिम्बित होते दिखाई देते हैं। अतः उनके अतीत की कथा-वस्तु होने पर भी पाठक उनके साथ अपनत्व अनुभव करने लगता है। गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यास आधुनिक युग-बोध और सामाजिक चेतना से सम्पृक्त नहीं हैं।

ooooooo